P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-III* Issue-II* October-2015

"आदिरन्त्येन सहेता" सूत्रार्थ–विचार

विनोद कुमार झा
अध्यक्ष,
व्याकरण संकाय,
श्री सोमनाथ संस्कृत युनिवर्सिटी,
वेरावल, गुजरात

सारांश

"आदिरन्त्येन सहेता" एक 'प्रत्याहार' निर्माण करने वाला सूत्र है। प्रस्तुत शोध–लेख में प्रकृत सूत्र का विभक्ति, वचन–निर्देश, सन्धि–विच्छेद, सूत्र में होने वाली अनुवृत्ति, विभक्ति–विपरिणाम, सूत्र की सस्कृत–वृत्ति, हिन्दी–अर्थ, आदि व अन्त शब्द की परिभाषा, प्रश्न–उत्तर तथा शंका–समाधान के माध्यम से सूत्र का गूढ़ार्थ ज्ञान, सोदाहरण प्रत्याहार निर्माण विधि, व्याकरण शास्त्र के सूत्र व वार्तिकों में प्रयुक्त प्रत्याहारों की सूची, किस इत्संज्ञक वर्ण से कितने प्रत्याहार बनते हैं, उनकी सूची प्रस्तुत की गई है। व्याकरणशास्त्र में प्रयुक्त होने वाले सभी प्रत्याहारों का दो श्लोकों में संग्रह इस प्रकार किया गया है। यथा–

"ङणटञ्वात् स्मृतो ह्येकः चत्वारश्च चमान्मताः।
शलाभ्यां षड् यरात्पञ्च षाद् द्वौ च कणतस्त्रयः।।
केषाञ्चिच्च मते रोऽपि प्रत्याहारोऽपरो मतः।
लस्थाऽवर्णेन वाञ्छन्त्यनुनासिकबलादिह।।"

मुख्य शब्द : प्रत्याहार, आदि, अन्त, इत्संज्ञक, सर्वनाम, संज्ञा।

प्रस्तावना

('प्रत्याहार' निर्माण करने वाला सूत्र)

(संज्ञा सूत्र) आदिरन्त्येन सहेता – 1/1/70

विभक्ति, वचन–निर्देश – आदिः– 1/1, अन्त्येन– 3/1, सह– अव्यय पद, इता– 3/1।

सन्धि–विच्छेद–आदिरन्त्येन = आदिस्[पद]+अन्त्येन (**"ससजुषो रुँः**[1]"– स्<रुँ, **"उपदेशेऽजनुनासिक इत्**[2]**"** एवं **"तस्य लोपः**[3]**"**– रुँ<र), **सहेता** = सह+इता (**"आद्गुणः**[4]**"**– अ+इ<ए)।

अनुवृत्ति– स्वं रूपं शब्दस्याशब्दसंज्ञा– 1/1/67– स्वम्।

विभक्ति–विपरिणाम – 'स्वम्' प्रथमान्त पद का षष्ठ्यन्त पद 'स्वस्य' में विपरिणाम = परिवर्तन हो जाता है।

वृत्ति– अन्त्येनेता सहित आदिर्मध्यगानां स्वस्य च संज्ञा स्यात्। यथाऽण् इति 'अ, इ, उ' वर्णानां सञ्ज्ञा। एवमक्, अच्, हल्, अल् इत्यादयः।

अर्थ– अन्त्य[1] (अन्तिम) इत्संज्ञक वर्ण से युक्त जो आदि[2], वह मध्य के वर्णों का और स्व (अपने स्वरूप) के अन्तर्गत आने वाले वर्णों का बोधक (बतलाने वाला) होता है। जैसे– 'अण्' प्रत्याहार 'अ, इ, उ' वर्णों का बोधक है, इसी प्रकार अच्, अल् एवं हल् आदि प्रत्याहार अपने स्वरूप के अन्तर्गत आने वाले वर्णों तथा मध्य वर्णों के बोधक होते हैं।

1. पूर्व रहते हुए, जिससे पर नहीं होता है, वह अन्त कहलाता है– 'यस्मात्परं नास्ति पूर्वमस्ति सोऽन्तः'।
2. पर रहते हुए, जिससे पूर्व नहीं होता है, वह आदि कहलाता है– 'यस्मात्पूर्वं नास्ति परमस्ति स आदिः'।

प्रश्न– "आदिरन्त्येन सहेता" सूत्र में अनुवृत्त 'स्वम्' पद से अन्त्य (अन्तिम) वर्ण का ग्रहण क्यों नहीं होता है?

उत्तर– 'स्व' सर्वनाम पद है। सर्वनाम पद सर्वदा प्रधान का ही बोध कराते हैं, अप्रधान का नहीं। "आदिरन्त्येन सहेता" सूत्र में प्रधान 'आदि' है, 'अन्त्य' नहीं। 'अन्त्य' अप्रधान है, क्योंकि **"सहयुक्तेऽप्रधाने**[5]**"** सूत्र से 'अप्रधान' में ही तृतीया विभक्ति होती है, इसलिए यहाँ 'अन्त्येन' में 'सह' के योग में तृतीया हुई है, अतः स्पष्ट है कि 'स्व' सर्वनाम पद से प्रधान 'आदि' का ही ग्रहण होता है, अप्रधान 'अन्त्य' का नहीं।

शंका– 'अण्', 'इक्' आदि प्रत्याहारों में आदि और मध्यस्थ वर्ण संज्ञी होते हैं, तो 'इक्' प्रत्याहार में अन्त्य वर्ण 'क्' का ग्रहण न होने पर भी बीच में पढ़े गये 'ण्' का तो ग्रहण होना चाहिए, परन्तु ऐसा नहीं होता, क्यो?

समाधान– आचार्य पाणिनि के अनुसार मध्यस्थ वर्ण यदि इत्संज्ञक हो, तो उनका प्रत्याहार में 'संज्ञी' के रूप में ग्रहण नहीं होता है, क्योंकि अगर इत्संज्ञक वर्ण भी संज्ञी होते, तो 'अच्' प्रत्याहार में 'क्' का भी ग्रहण होता, क्योंकि यह भी

मध्यस्थ वर्ण है। 'अच्' प्रत्याहार में 'क्' का ग्रहण होने पर "उपदेशेऽजनुनासिक इत्" सूत्र के 'अनुनासिकः' पद का 'क्' (अच्) के परे रहते सकारोत्तर (स्+इ) 'इ' को **"इको यणचि[6]"** सूत्र से 'य्' यणादेश, तथा **"लोपो व्योर्वलि[7]"** सूत्र से 'य्' का लोप होकर 'अनुनास्कः' ऐसा प्रयोग बनता, परन्तु आचार्य को यह पद अभीष्ट नहीं है, अतः 'अनुनासिकः' आदि प्रयोगों से स्पष्ट हो जाता है कि आचार्य मध्यवर्ती इत्संज्ञक वर्णों को 'संज्ञी' के रूप में ग्रहण नहीं करते हैं।

प्रत्याहार– 'प्रत्याह्रियन्ते = संक्षिप्यन्ते वर्णा अत्रेति प्रत्याहारः' अर्थात् जिसमें वर्णों को संक्षेप में कहा जाता है, वह प्रत्याहार कहलाता है। 'अण्' आदि संज्ञाओं को प्राचीन आचार्य 'प्रत्याहार' कहते थे, अतः पाणिनीय व्याकरण शास्त्र में भी "आदिरन्त्येन सहेता" सूत्र से की जाने वाली संज्ञा 'प्रत्याहार' शब्द से व्यवहृत होती है।

प्रत्याहार निर्माण विधि

अच् (प्रत्याहार)	
अन्त्य (अन्तिम) इत्	च्।
तत्सहित (अन्त्य इत् सहित) आदि	अच्।
स्वयं (अपने स्वरूप) के वर्ण	अ, च्।
'स्वयं' पद से प्रत्याहारगत केवल 'आदि' वर्ण का ही ग्रहण होता है।	अ, ~~च्~~।
प्रत्याहार में इत्संज्ञक वर्णों का ग्रहण नहीं होता है।	इ, उ, ~~ण्~~, ऋ, लृ, ~~क्~~, ए, ओ, ~~ङ्~~, ऐ, औ।
मध्यस्थ (मध्य में स्थित) वर्ण	इ, उ, ऋ, लृ, ए, ओ, ऐ, औ।
स्वयम्	1+
मध्यस्थ वण	8
कुल	9

"आदिरन्त्येन सहेता" सूत्र में पठित 'आदि' शब्द माहेश्वर सूत्रों में आदि की अपेक्षा नहीं रखता है, अपितु माहेश्वर सूत्रों में बुद्धि से कल्पित समुदाय की अपेक्षा रखता है। यथा– 'इक्' प्रत्याहार।

इक् (प्रत्याहार)	
अन्त्य (अन्तिम) इत्	क्।
तत्सहित (अन्त्य इत् सहित) आदि	इक्।
स्वयं (अपने स्वरूप) के वर्ण	इ, क्।
'स्वयं' पद से प्रत्याहारगत केवल 'आदि' वर्ण का ही ग्रहण होता है।	इ, ~~क्~~।
प्रत्याहार में इत्संज्ञक वर्णों का ग्रहण नहीं होता है।	उ, ~~ण्~~, ऋ, लृ।
मध्यस्थ (मध्य में स्थित) वर्ण	उ, ऋ, लृ।
स्वयम्	1+
मध्यस्थ वर्ण	3
कुल	4

नोट– 'इक्' प्रत्याहार का 'इ' माहेश्वर सूत्रों की अपेक्षा 'आदि' न होकर बुद्धि से कल्पित एवं 'आदि' तथा 'अन्त' शब्दों से आक्षिप्त समुदाय = 'इ, उ, ण्, ऋ, लृ, क्' की अपेक्षा 'आदि' है।

इसी प्रकार **"आदिरन्त्येन सहेता"** सूत्र में पठित 'अन्त' शब्द माहेश्वर सूत्रों में अन्त की अपेक्षा नहीं रखता है, अपितु माहेश्वर सूत्रों में बुद्धि से कल्पित समुदाय की अपेक्षा रखता है। यथा– 'रँ' प्रत्याहार।

रँ (प्रत्याहार)	
अन्त्य (अन्तिम) इत्	अँ।
तत्सहित (अन्त्य इत् सहित) आदि	रँ।
स्वयं (अपने स्वरूप) के वर्ण	र्, अँ।
'स्वयं' पद से प्रत्याहारगत केवल 'आदि' वर्ण का ही ग्रहण होता है।	र्, ~~अँ~~।
प्रत्याहार में इत्संज्ञक वर्णों का ग्रहण नहीं होता है।	ट्, ~~ल्~~।
मध्यस्थ (मध्य में स्थित) वर्ण	ल्।
स्वयम्	1+
मध्यस्थ वर्ण	1
कुल	2

नोट– 'रँ' प्रत्याहार का 'अँ' माहेश्वर सूत्रों की अपेक्षा 'अन्त' न होकर बुद्धि से कल्पित एवं 'आदि' तथा 'अन्त' शब्दों से आक्षिप्त समुदाय= 'र्, ट्, ल, अँ' की अपेक्षा 'अन्त' है।

विशेष– "अइउण्" आदि सूत्रों से अनेक प्रत्याहार बनाये जा सकते हैं, परन्तु व्याकरणशास्त्र में मुख्यतः जिन प्रत्याहारों का व्यवहार होता है, वे संख्या में चवालीस (44) हैं। इनमें से भी कुछ आचार्य 'र' प्रत्याहार को स्वीकार नहीं करते हैं, अतः इनके मत में प्रत्याहारों की संख्या तैंतालीस (43) ही रह जाती हैं। इनमें आचार्य पाणिनि ने इक्तालीस (41) प्रत्याहारों का प्रयोग सूत्रों में किया है, तथा अवशिष्ट दो प्रत्याहारों में 'ञम्' प्रत्याहार का उणादि सूत्र तथा 'चय्' प्रत्याहार का वार्तिक में पाठ है।

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-III* Issue-II* October-2015

व्याकरण शास्त्र में प्रयुक्त प्रत्याहारों की सूची

क्रम	प्रत्याहार	प्रत्याहार – वर्ण	सूत्र
1	अण्	अ, इ, उ (3)	उरण् रपरः
2	अक्	अ, इ, उ, ऋ, ऌ (5)	अकः सवर्णे दीर्घः
3	इक्	इ, उ, ऋ, ऌ (4)	इको यणचि
4	उक्	उ, ऋ, ऌ (3)	उगितश्च
5	एङ्	ए, ओ (2)	एङः पदान्तादति
6	अच्	अ, इ, उ, ऋ, ऌ, ए, ओ, ऐ, औ (9)	इको यणचि
7	इच्	इ, उ, ऋ, ऌ, ए, ओ, ऐ, औ (8)	नादिचि
8	एच्	ए, ओ, ऐ, औ (4)	एचोऽयवायावः
9	ऐच्	ऐ, औ (2)	वृद्धिरादैच्
10	अट्	अ, इ, उ, ऋ, ऌ, ए, ओ, ऐ, औ, ह्, य्, व्, र् (13)	अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि
11	अण्	अ, इ, उ, ऋ, ऌ, ए, ओ, ऐ, औ, ह्, य्, व्, र्, ल् (14)	अणुदित्सवर्णस्य चाऽप्रत्ययः
12	इण्	इ, उ, ऋ, ऌ, ए, ओ, ऐ, औ, ह्, य्, व्, र्, ल् (13)	इणः षीध्वंलुङ्लिटां धोऽङ्गात्
13	यण्	य्, व्, र्, ल् (4)	इको यणचि
14	अम्	अ, इ, उ, ऋ, ऌ, ए, ओ, ऐ, औ, ह्, य्, व्, र्, ल्, ञ्, म्, ङ्, ण्, न् (19)	पुमः खय्यम्परे
15	यम्	य्, व, र्, ल्, ञ्, म्, ङ्, ण्, न् (9)	हलो यमां यमि लोपः
16	ञम्	ञ्, म्, ङ्, ण्, न् (5)	ञमन्ताङ्डः (उ0 सू0)
17	ङम्	ङ्, ण्, न् (3)	ङमो ह्रस्वादचि ङमुण् नित्यम्
18	यञ्	य, व, र्, ल, ञ्, म, ङ्, ण्, न्, झ्, भ् (11)	अतो दीर्घो यञि
19	झष्	झ्, भ्, घ्, ढ्, ध् (5)	एकाचो बशो भष् झषन्तस्य स्ध्वोः
20	भष्	भ्, घ्, ढ्, ध् (4)	एकाचो बशो भष् झषन्तस्य स्ध्वोः
21	अश्	अ, इ, उ, ऋ, ऌ, ए, ओ, ऐ, औ, ह्, य्, व्, र्, ल्, ञ्, म्, ङ्, ण्, न्, झ्, भ्, घ्, ढ्, ध्, ज्, ब्, ग्, ड्, द् (29)	भोभगोअघोअपूर्वस्य योऽशि
22	हश्	ह्, य्, व्, र्, ल, ञ्, म्, ङ्, ण्, न्, झ्, भ्, घ्, ढ्, ध्, ज्, ब्, ग्, ड्, द् (20)	हशि च
23	वश्	व, र्, ल, ञ्, म्, ङ्, ण्, न्, झ्, भ्, घ्, ढ्, ध्, ज्, ब्, ग्, ड्, द् (18)	नेड्वशि कृति
24	जश्	ज्, ब्, ग्, ड्, द् (5)	झलां जश् झशि
25	झश्	झ्, भ्, घ्, ढ्, ध्, ज्, ब्, ग्, ड्, द् (10)	झलां जशोऽन्ते
26	बश्	ब्, ग्, ड्, द् (4)	एकाचो बशो भष् झषन्तस्य स्ध्वोः
27	छव्	छ्, ठ्, थ्, च्, ट्, त् (6)	नश्छव्यप्रशान्
28	यय्	य्, व्, र्, ल्, ञ्, म्, ङ्, ण्, न्, झ्, भ्, घ्, ढ्, ध्, ज्, ब्, ग्, ड्, द्, ख्, फ्, छ्, ठ्, थ्, च्, ट्, त्, क्, प् (29)	अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः
29	मय्	म्, ङ्, ण्, न्, झ्, भ्, घ्, ढ्, ध्, ज्, ब्, ग्, ड्, द्, ख्, फ्, छ्, ठ्, थ्, च्, ट्, त्, क् ,प् (24)	मय उञो वो वा
30	झय्	झ्, भ्, घ्, ढ्, ध्, ज्, ब्, ग्, ड्, द्, ख्, फ्, छ्, ठ्, थ्, च्, ट्, त्, क्, प् (20)	झयो होऽन्यतरस्याम्
31	खय्	ख्, फ्, छ्, ठ्, थ्, च्, ट्, त्, क्, प् (10)	पुमः खय्यम्परे
32	चय्	च्, ट्, त्, क्, प् (5)	चयो द्वितीयाः शरि पौष्करसादेरिति वाच्यम् (वा0)
33	य्	यर्, व्, र्, ल्, ञ्, म्, ङ्, ण्, न्, झ्, भ्, घ, ढ्, ध्, ज्, ब्, ग्, ड्, द्, ख्, फ्, छ्, ठ्, थ्, च्, ट्, त्, क्, प्, श्, ष्, स् (32)	यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा
34	झ्	झर, भ्, घ्, ढ्, ध्, ज्, ब्, ग्, ड्, द्, ख्, फ्, छ्, ठ्, थ्, च्, ट्, त्, क्, प्, श्, ष्, स् (23)	झरो झरि सवण
35	ख्	खर, फ्, छ्, ठ्, थ्, च्, ट्, त्, क्, प्, श्, ष्, स् (13)	खरि च
36	च्	चर्, ट्, त्, क्, प्, श्, ष्, स् (8)	अभ्यासे चर्च
37	श्	शर, ष्, स् (3)	ङ्णोः कुँक्टुँक् शरि
38	अल्	अ, इ, उ, ऋ, ऌ, ए, ओ, ऐ, औ, ह्, य्, व्, र्, ल्, ञ, म्, ङ्, ण्, न्, झ्, भ्, घ्, ढ्, ध्, ज्, ब्, ग्, ड्, द्, ख्, फ्, छ्, ठ्, थ्, च्, ट्, त्, क्, प्, श्, ष्, स्, ह् (43)	अलोऽन्त्यस्य

39	हल्	ह, य्, व्, र्, ल्, ञ्, म्, ङ्, ण्, न्, झ्, भ्, घ्, ढ्, ध्, ज्, ब्, ग्, ड्, द्, ख्, फ्, छ्, ठ्, थ्, च्, ट्, त्, क्, प्, श्, ष्, स्, ह् (34)	हलोऽनन्तराः संयोगः
40	वल्	व्, र्, ल्, ञ्, म्, ङ्, ण्, न्, झ्, भ्, घ्, ढ्, ध्, ज्, ब्, ग्, ड्, द्, ख्, फ्, छ्, ठ्, थ्, च्, ट्, त्, क्, प्, श्, ष्, स्, ह् (32)	लोपो व्योर्वलि
41	रल्	र्, ल्, ञ्, म्, ङ्, ण्, न्, झ्, भ्, घ्, ढ्, ध्, ज्, ब्, ग्, ड्, द्, ख्, फ्, छ्, ठ्, थ्, च्, ट्, त्, क्, प्, श्, ष्, स्, ह् (31)	रलो व्युपधाद्धलादेः संश्च
42	झल्	झ्, भ्, घ्, ढ्, ध्, ज्, ब्, ग्, ड्, द्, ख्, फ्, छ्, ठ्, थ्, च्, ट्, त्, क्, प्, श्, ष्, स्, ह् (24)	झलो झलि
43	शल्	श्, ष्, स्, ह् (4)	शल इगुपधादनिटः क्सः
44	रँ	र्, ल् (2)	उरण् रपरः

व्याकरणशास्त्र में प्रयुक्त होने वाले सभी प्रत्याहारों का दो श्लोकों में संग्रह इस प्रकार किया गया है–

"ङणटञ्वात् स्मृतो ह्येकः चत्वारश्च चमान्मताः।
शलाभ्यां षड् यरात्पञ्च षाद् द्वौ च कणतस्त्रयः।।
केषाञ्चिच्च्च मते रोऽपि प्रत्याहारोऽपरो मतः।
लस्थाऽवर्णेन वाञ्छन्त्यनुनासिकबलादिह।।"

अर्थात् 'ङ्', 'ण्', 'ट्', 'ञ्', 'व्' से एक–एक प्रत्याहार जैसे– एङ्, अण्, अट्, यञ्, छव्। 'च्', 'म्' से चार–चार प्रत्याहार जैसे–अच्, इच्, एच्, ऐच्, अम्, यम्, ञम्, ङम्। 'श्', 'ल्' से छह–छह प्रत्याहार जैसे– अश्, हश्, वश्, जश्, झश, बश, अल्, हल्, वल्, रल्, झल्, शल्। 'य्', र्, से पाँच–पाँच प्रत्याहार जैसे– यय्, मय्, झय्, खय्, चय्, यर्, झर खर्, चर्, शर्। 'ष्' से दो प्रत्याहार जैसे– झष्, भष्। 'क्', 'ण्' से तीन–तीन प्रत्याहार जैसे– अक्, इक्, उक्, अण्, इण्, यण् बनते हैं। कुछ आचार्यों के मत में **"लँण्[8]"** सूत्रस्थ अवर्ण के अनुनासिक होने के कारण एक अन्य 'रँ' प्रत्याहार भी माना जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. पा. अ. सूत्र.*– 8/2/66
2. पा. अ. सूत्र.– 1/3/2
3. पा. अ. सूत्र.– 1/3/9
4. पा. अ. सूत्र.– 6/1/84
5. पा. अ. सूत्र.– 2/3/19
6. पा. अ. सूत्र.– 6/1/74
7. पा. अ. सूत्र.– 6/1/64
8. पा. अ. सूत्र.– माहेश्वर सूत्र सं.– 6

*पाणिनीय–अष्टाध्यायी–सूत्रपाठः